अफजल की फांसी भारत के लोकतंत्र पर धब्बा है: अरुंधति राय

अफजल गुरु के खिलाफ मामले में भारी खामियों के बावजूद भारत के सारे संस्थानों ने एक कश्मीरी 'आतंकवादी 'को मारने में भूमिका निभाई. अफजल की फांसी पर द गार्जियन में प्रकाशित अरुंधति राय का लेख. अनुवाद: रेयाज उल हक

शनिवार को दिल्ली में बसंत ने दस्तक दी. सूरज निकला था और कानून ने अपना काम किया. नाश्ते से ठीक पहले, 2001 में संसद पर हमले के मुख्य आरोपी अफजल गुरु को खुफिया तरीके से फांसी दे दी गई और उनकी लाश को दिल्ली के तिहाड़ जेल में मिट्टी में दबा दिया गया, जहां वे 12 बरसों से कालकोठरी में रखे गए थे. अफजल की बीवी और बेटे को इत्तला नहीं दी गई थी. 'अधिकारियों ने स्पीड पोस्ट और रजिस्टर्ड पोस्ट से परिवार वालों को सूचना भेज दी है,' गृह सचिव ने प्रेस को बताया, 'जम्मू कश्मीर पुलिस के महानिदेशक को कह दिया गया है कि वे पता करें कि सूचना उन्हें मिल गई है कि नहीं.' ये कोई बड़ी बात नहीं है, वो तो बस एक कश्मीरी दहशतगर्द के परिवार वाले हैं.

एकता के एक दुर्लभ पल में राष्ट्र, या कम से कम इसके मुख्य राजनीतिक दल, कांग्रेस, भाजपा और भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) ('देरी' और 'समय' पर छोटे-मोटे मतभेद को छोड़ दें तो) कानून के राज की जीत का जश्न मनाने के लिए एक साथ आए. टीवी स्टूडियो के जरिए लाइव प्रसारणों ने धर्मात्माओं सरीखे उन्माद और तथ्यों की नाजुक पकड़ की वही हमेशा की खिचड़ी के साथ फटी आवाज में 'लोकतंत्र की विजय' का शोर मचाया. दक्षिणपंथी हिंदू राष्ट्रवादियों ने फांसी पर मिठाइयां बांटीं और कश्मीरियों को पीटा (लड़कियों पर विशेष ध्यान देते हुए), जो दिल्ली में विरोध करने के लिए जमा हुए थे. यहां तक कि गुरु मर चुके थे और जा चुके थे, तब भी झुंड में शिकार खेलने वाले बुजदिलों की तरह उन्हें एक दूसरे का हौसला बढ़ाने की जरूरत पड़ रही थी. शायद इसलिए क्योंकि अपने मन की गहराई में वे जानते थे कि वे सब एक भयानक रूप से गलत काम के लिए जुटे हुए हैं.

तथ्य क्या हैं? 13 दिसंबर 2001 को पांच हथियारबंद लोग बम के साथ एक सफेद एंबेस्डर कार से संसद भवन के दरवाजों से दाखिल हुए. जब उन्हें ललकारा गया तो वो कार से निकल आए और गोलियां चलाने लगे. उन्होंने आठ सुरक्षाकर्मियों और माली को मार डाला. इसके बाद हुई गोलीबारी में पांचों हमलावर मारे गए. पुलिस हिरासत में दिए गए कबूलनामों के अनेक वर्जनों में से एक में अफजल गुरु ने उन लोगों की पहचान मोहम्मद, राणा, राजा, हमजा और हैदर के रूप में की. आज तक भी, हम उन लोगों के बारे में कुल मिला कर इतना ही जानते हैं. उनके पूरे नाम भी नहीं थे. तब की भाजपा सरकार के गृहमंत्री एल.के. अडवाणी ने कहा कि वे 'पाकिस्तानियों जैसे दिखते थे.' (उन्हें पता होना ही चाहिए कि ठीक-ठीक पाकिस्तानी की तरह दिखना क्या होता है? वे खुद एक सिंधी जो हैं.) सिर्फ अफजल के कबूलनामे के आधार पर (जिसे सुप्रीम कोर्ट ने बाद में 'खामियों' और 'कार्यवाही संबंधी सुरक्षा प्रावधानों के उल्लंघनों' के आधार पर खारिज कर दिया था) सरकार ने पाकिस्तान से अपना राजदूत वापस बुला लिया था और पांच लाख फौजियों को पाकिस्तान से लगी सरहद पर तैनात कर दिया था. परमाणु युद्ध की बातें होने लगीं थीं. विदेशी दूतावासों ने यात्रा संबंधी सलाहें जारी कर दी थीं और दिल्ली से अपने कर्मचारियों को बुला लिया था. असमंजस की यह स्थिति कई महीनों तक चली और भारत के हजारों करोड़ रुपए खर्च हुए.

24 घंटों के भीतर, कुख्यात दिल्ली पुलिस स्पेशल सेल ने (जो फर्जी 'मुठभेड़ों' में हत्या करने के लिए बदनाम है) दावा किया कि उसने मामले को सुलझा लिया है. 15 दिसंबर को उसने दिल्ली में 'मास्टरमाइंड' प्रोफेसर एस.ए.आर. गीलानी और श्रीनगर में फल बाजार से शौकत गुरु और अफजल गुरु को गिरफ्तार किया. बाद में उन्होंने शौकत की बीवी अफशां गुरु को गिरफ्तार किया. मीडिया ने जोशोखरोश से स्पेशल सेल की कहानी का प्रचार किया. कुछ सुर्खियां ऐसी थीं: 'डीयू लेक्चरर वाज टेरर प्लान हब', 'वर्सिटी डॉन गाइडेड फिदायीन', 'डॉन लेक्चर्ड ऑन टेरर इन फ्री टाइम.' जी टीवी ने दिसंबर 13 नाम से एक 'डॉक्यूड्रामा' प्रसारित किया, जो कि 'पुलिस के आरोप पत्र पर आधारित सच्चाई' होने का दावा करते हुए उसकी पुनर्प्रस्तुति थी. (अगर पुलिस की कहानी सही है, तो फिर अदालतें किसलिए?) तब प्रधानमंत्री वाजपेयी और एल.के. आडवाणी ने सरेआम फिल्म की तारीफ की. सर्वोच्च न्यायालय ने इस फिल्म के प्रदर्शन पर रोक लगाने से यह कहते हुए मना कर दिया कि मीडिया जजों को प्रभावित नहीं करेगा. फिल्म फास्ट ट्रेक कोर्ट द्वारा अफजल, शौकत और गीलानी को फांसी की सजा सुनाए जाने के सिर्फ कुछ दिन पहले ही दिखाई गई. उच्च न्यायालय ने 'मास्टरमाइंड' प्रोफेसर एस.ए.आर. गीलानी और अफशां गुरु को आरोपों से बरी कर दिया. सर्वोच्च न्यायालय ने उनकी रिहाई को बरकरार रखा. लेकिन 5 अगस्त, 2005 के अपने फैसले में इसने मोहम्मद अफजल को तिहरे आजीवन कारावास और दोहरी फांसी की सजा सुनाई.

भाजपा ने फौरन फांसी देने की मांग की. इसका एक चुनावी नारा था, 'देश अभी शर्मिंदा है, अफजल अभी भी जिंदा है.' शिकायतों को कुंद करने के लिए, जो अब सतह पर आने लगी थीं, एक ताजा

मीडिया अभियान शुरू हुआ. अब भाजपा के सांसद और तब पायनियर के संपादक चंदन मित्रा ने लिखा: 'अफजल गुरु उन आतंकवादियों में से एक था, जिन्होंने 13 दिसंबर, 2001 को संसद भवन पर हमला किया था. वो सुरक्षाकर्मियों पर गोली चलाने वालों में से पहला था, और उसने मारे गए छह लोगों में तीन को प्रत्यक्षत: मारा था.' यहां तक कि पुलिस के आरोप पत्र में भी अफजल के खिलाफ ये आरोप नहीं लगाए गए. सर्वोच्च न्यायालय का फैसला कबूल करता है कि सबूत परिस्थितिजन्य थे: 'ज्यादातर साजिशों के मामलों की तरह, आपराधिक साजिश के समकक्ष सबूत नहीं है और न हो सकता है.' लेकिन फिर, हैरतअंगेज रूप से, उसने आगे कहा: 'हमला, जिसने भारी नुकसान पहुंचाया और संपूर्ण राष्ट्र को हिला कर रख दिया, और समाज की सामूहिक चेतना केवल तभी संतुष्ट हो सकती है अगर अपराधी को फांसी की सजा दी गई.'

संसद हमले के मामले में हमारी सामूहिक चेतना का किसने निर्माण किया? क्या ये वे तथ्य होते हैं, जिन्हें हम अखबारों से हासिल करते हैं? फिल्में, जिन्हें हम टीवी पर देखते हैं? कानून के शासन का जश्न मनाने के पहले आइए देखते हैं कि क्या हुआ था.

जो लोग कानून के शासन की विजय का जश्न मना रहे हैं वो यह दलील देंगे कि ठीक यही तथ्य, कि अदालत ने एस.ए.आर. गीलानी को छोड़ दिया और अफजल को दोषी ठहराया, यह साबित करता है कि सुनवाई मुक्त और निष्पक्ष थी. थी क्या?

फास्ट-ट्रेक कोर्ट में मई, 2002 में सुनवाई शुरू हुई. दुनिया 9-11 के बाद के उन्माद में थी. अमेरिकी सरकार अफगानिस्तान में अपनी 'विजय' पर हड़बड़ाए हुए टकटकी बांधे थी. गुजरात राज्य में पुलिस तथा राज्य सरकार की मशीनरी की मदद से हिंदू गुंडा दस्तों द्वारा फरवरी के आखिरी दिनों में शुरू हुआ मुसलमानों का जनसंहार छिटपुट रूप से अब भी जारी था. सांप्रदायिक नफरत से माहौल उग्र था. और संसद पर हमले के मामले में कानून अपनी राह चल रहा था. एक आपराधिक मामले के सबसे अहम चरण में, जब सबूत पेश किए जाते हैं, जब गवाहों से सवाल-जवाब किए जाते हैं, जब दलीलों की बुनियाद रखी जाती है – उच्च न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय में आप केवल कानून के नुक्तों पर बहस कर सकते हैं, आप नए सबूत नहीं पेश कर सकते – अफजल गुरु भारी सुरक्षा वाली कालकोठरी में बंद थे. उनके पास कोई वकील नहीं था. अदालत द्वारा नियुक्त जूनियर वकील एक बार भी जेल में अपने मुवक्किल से नहीं मिला, उसने अफजल के बचाव में एक भी गवाह को नहीं बुलाया और न ही अभियोग पक्ष द्वारा पेश किए गए गवाहों का क्रॉस-एक्जामिनेशन किया. जज ने इस स्थिति के बारे कुछ पाने में अपनी अक्षमता जाहिर की.

तब भी, शुरुआत से ही, केस बिखर गया. अनेक मिसालों में से कुछेक यों हैं: अफजल के खिलाफ सबसे ज्यादा आरोप लगाने वाले दो सबूत एक सेलफोन और एक लैपटॉप था, जिसे उनकी गिरफ्तारी के वक्त जब्त किया गया. कंप्यूटर और सेलफोन को सील नहीं किया गया, जैसा कि एक सबूत के मामले में किया जाता है. सुनवाई के दौरान यह सामने आया कि लैपटॉप के हार्ड डिस्क को गिरफ्तारी के बाद उपयोग में लाया गया था. इसमें गृह मंत्रालय के फर्जी पास और फर्जी पहचान पत्र थे जिसे आतंकवादियों ने संसद में घुसने के लिए इस्तेमाल किया था. और संसद भवन का एक जी टीवी वीडियो क्लिप. इस तरह पुलिस के मुताबिक, अफजल ने सभी सूचनाएं डीलीट कर दी थीं, बस सबसे ज्यादा दोषी ठहराने वाली चीजें रहने दी थीं, और वो इसे गाजी बाबा को देने जा रहा था, जिनको आरोप पत्र में चीफ ऑफ ऑपरेशन कहा गया है.

पुलिस के एक गवाह कहा कि उसने 4 दिसंबर, 2001 को वह महत्वपूर्ण सिम कार्ड अफजल को बेचा था, जिससे मामले के सभी अभियुक्त के संपर्क में थे. लेकिन अभियोग पक्ष के अपने कॉल रिकॉर्ड दिखाते हैं कि सिम 6 नवंबर 2001 से काम कर रहा था.

पुलिस अफजल तक कैसे पहुंची? उनका कहना है कि एस.ए.आर. गीलानी ने उनके बारे में बताया. लेकिन अदालत के रिकॉर्ड दिखाते हैं कि अफजल की गिरफ्तारी का संदेश गीलानी को उठाए जाने से पहले ही आ गया था. उच्च न्यायालय ने इसे 'भौतिक विरोधाभास' कहा लेकिन इसे यों ही कायम रहने दिया.

अरेस्ट मेमो पर दिल्ली के बिस्मिल्लाह के दस्तखत हैं जो गीलानी के भाई हैं. सीजर मेमो पर जम्मू-कश्मीर पुलिस के दो कर्मियों के दस्तखत हैं, जिनमें से एक अफजल के उन दिनों का उत्पीड़क था, जब वे एक आत्मसमर्पण किए हुए 'चरमपंथी' हुआ करते थे.

ऐसी ही और भी बातें हैं, और भी बातें, झूठों के अंबार और मनगढ़ंत सबूत. अदालत ने उन पर गौर किया, लेकिन पुलिस को अपनी मेहनत के लिए हल्की की झिड़की से ज्यादा कुछ नहीं मिला. इससे ज्यादा कुछ नहीं.

जिसको संसद पर हमले के रहस्य को सुलझाने में सचमुच दिलचस्पी रही होती, उसे पेश किए गए सबूतों की एक घनी राह से गुजरना होता. किसी ने ऐसा नहीं किया, और इस तरह यह सुनिश्चित किया गया कि साजिश के असली रचनाकारों की पहचान नहीं होगी और उनके बारे में कोई तफ्तीश नहीं होगी.

गुरु के साथ जो हुआ उसकी असली कहानी और त्रासदी इतनी गहन है कि अदालत में नहीं समा सकती. असली कहानी हमें कश्मीर घाटी की तरफ ले जाएगी, उस संभावित परमाणु उत्तेजना के केंद्र और दुनिया के सबसे सघन फौजी इलाके की तरफ, जहां पांच लाख भारतीय फौजी (चार नागरिकों पर एक फौजी) तथा फौजी शिविरों का एक जाल और यातना कक्ष (टॉर्चर चेंबर), जो कि अबू गरीब को भी पीछे छोड़ देंगे, कश्मीरी लोगों के लिए धर्मनिरपेक्षता और लोकतंत्र ला रहे हैं. 1990 से, जब आत्म-निर्णय के लिए संघर्ष जुझारू हुआ, 68,000 लोग मारे गए हैं, 10,000 लोग लापता हैं और कम से कम 100,000 लोगों को यातनाएं दी गई हैं.

जेल की कोठरियों में मर चुके दसियों हजार लोगों के उलट, जो बात गुरु की हत्या को अलग करती है, वो यह है कि उनकी जिंदगी और मौत का खेल दिन दहाड़े अंधी कर देनेवाली रोशनी में खेला गया, जिसमें भारतीय लोकतंत्र के सभी संस्थानों ने उनको मारने में अपनी भूमिकाएं निभाई.

अब उन्हें फांसी दी जा चुकी है, मैं उम्मीद करती हूं कि हमारी सामूहिक चेतना संतुष्ट हो गई होगी. या हमारा खून का कटोरा अभी आधा ही भरा है?